आधी कटोरी चाँदनी

अजातशत्रु का काव्य संग्रह



राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर
के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित

आधी कटोरी चाँदनी

(काव्य संग्रह)

अजातशत्रु

प्र

प्रारम्भ प्रकाशन

ग़ाज़ियाबाद



प्रारम्भ प्रकाशन

R-64 सैक्टर-12, प्रताप विहार, ग़ाज़ियाबाद-201009 (उ. प्र.)

फोन—0575—4742464

ISBN 81-86694-17-X

मूल्य : 100 रुपये

प्रकाशक : स्वर्णिमा 'तुषार'

प्रथम संस्करण : 2000

शब्द संयोजक : एस. के. कम्प्यूटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

मुद्रक : आर. के. ऑफसेट, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

AADHI KATORI CHANDNI

By *Ajatshatroo*

भूमिका

काव्य-सृजन का समय सबसे महत्त्वपूर्ण विन्दु है, और उस बिन्दु के बारे में ठीक वैसा का वैसा लिख पाना बहुत कठिन काम है। जीवन के कितने स्वाद, कितना कुछ लिखा, कितना अनलिखा रह गया। सार तो कहीं छूट गया, थोथा ही हाथ लगा, फिर याद्दाश्त का क्या भरोसा, घटना का मर्म ही कहीं छूट जाए, वैसे भी मन तो यायावर वेलगाम घोडा है, हॉंको पूरब में तो भागे पश्चिम को।

लेकिन पहले संग्रह पर लिखते हुए मन में कुछ स्मृतिचित्र बार-बार आ टिकते हैं, जैसे अभी-अभी किसी ने कच्ची नींद से जगा दिया है, सामने खड़ा है दिवंगत भाई नरोत्तम के साथ हनुमान मंदिर के इर्द-गिर्द गोबर लेने जाता अनिल, दादी की उँगली पकड भजनमण्डलियों तक पहुँचता अनिल, साँझ ढले उसी की कोख में समा प्रेत कथाओं को सुन घुप्प अँधेरे की विचित्र छायाकृतियों से डरता-सहमता अनिल, ठीक इसके विपरीत नदी पर कपड़े धोने जाती दिवंगत बड़ी बहिन लाली के संग सुरक्षा प्रहरी की तरह निडर कूदता-फाँदता पुछलग्गा अनिल, जून की तेज़ धूप में कुल्फी वाले के पीछे भागता, कुरावड (पैतृक गाँव) की गलियों के गुल्ली-डण्डे छोड ख़ूबसूरत शहर उदयपुर के समीप बेदला मे किशोर क़दम रखता अजीत सिंह, स्कूल से भागकर फिल्में देखता अजीत सिंह, कभी अमरूद की बाड़ियों से अमरूद चुराता है, कभी घण्टों नदी में पानी के साथ खेलता है, कभी पिता के क्रोध तो कभी माँ के प्यार का पुरस्कार पाता है। कभी विद्यालय में बडे भाई की कविताएँ सुना वाहवाही लूटता है तो कभी किशोर मन में ऊँचे-ऊँचे दिवास्वप्न सजाता है।

कितने ही बिम्ब उभरते ``` ओझल होते हैं। पहले संग्रह की भूमिका लिखते हुए बाल्यकाल ही की अधिक याद आ रही है, समझ नहीं पा रहा हूँ। बहरहाल समय की चौखटो में तने रचना के क्षण कहाँ कितने सार्थक होते है कहना कठिन है। हज़ारों जवान इच्छाएँ जन्म लेतीं और मरतीं है, तब कहीं अनिल और अजीत सिंह में अजातशत्रु दिखाई देता है। इस रंगमंच पर और कितने पात्रो की भूमिका निभानी है? कितने मंत्रो पर अभिनय करना है? कितनी अजन्मी कविताओं का माध्यम बनना है? कितनी यात्राओं में कहाँ-कहाँ भटकना है? कब रास्ता खत्म होगा? कब अँधेरे और उजाले की परिक्रमाएँ समाप्त होगी? इस यात्रा के अग्रज सहयात्री श्रद्धेय नंद चतुर्वेदी, तारा प्रकाश जोशी, डॉ. नईम, जहीर कुरैशी, कुँअर बेचैन, वेदव्यास, मंगल सक्सेना, भगवती लाल व्यास, किशन दाधीच जैसे शब्दपुरुष प्रिय कवि मित्र गोपाल गर्ग, दिनेश सिन्दल, कुमार विश्वास, प्रवीण शुक्ल, बडे भाई पत्रकार रवीन्द्र शाह और धर्मपत्नी कोशल में तमाम सहयात्री जिन्होंने कच्ची नींद से

बड़े भाई पत्रकार उग्रसेन राव के

संघर्ष को समर्पित

खण्डकाव्य हैं .... सुनती हो !

हम और तुम
बीते युग का खण्डकाव्य हैं
.... सुनती हो !

सत्तर के आगे की
झुकती ऊँचाई
दो से तीन हुए
पैरों की कठिनाई
फिर ऐनक में सुधियों के दिन
बुनती हो

सुनो ... !
हँसी की आवाज़ें
अपनी ही हैं
गदहपचीसी की बातें
जपनी ही हैं
थाली के चावल से
कंकर चुनती हो

जहाँ खनकती पायल
आज वहाँ पर खाँसी
मंगलमय सूत्रों की याद
लगे है फाँसी
चेहरे की झुर्री में
अनुभव गुनती हो

अग्नि परीक्षा

एक युग सा
एक दिन बीता
आदमी फिर रह गया रीता
झूठ की कितनी ज़ुबानें हैं
सत्य की भी दास्तानें हैं
पाप ने ली हाथ में गीता
आदमी फिर रह गया रीता

रावणों को देनी दीक्षा है
हर घड़ी अग्नि परीक्षा है
लाँछनों से कब बची सीता
आदमी फिर रह गया रीता

नाप ले जो मन की बातों को
भाँप ले जो काली रातों को
अब कहाँ उस कोण का फीता
आदमी फिर रह गया रीता

.... लो नदी आई!

रेत लाई
पर्वतों की चिट्ठियाँ
सबको बधाई
लो नदी आई!

धूल के उड़ते बवण्डर
दौड़ते लम्बे दिनों की पीठ पर
शंख-घोंघे, सीप-कंकर
झाँकती लहरों में
किरण कुनकुनाई!

दिन मछेरे बन गए अब
जाल, चप्पू, डोंगियां
सब कामकाजी
खुल गए दफ़्तर
चमकते सागरों के
नौकरी ये आठमासी
रेत के काग़ज़ पे मछली छटपटाई !

फिर लहर छूने लगी तट को
हुआ आलिंगन ... चुम्बन
शर्म से झुकने लगे
तटवृक्ष सारे
दो किनारों का
उफनता जा रहा मन
फिर पकड़ ली नर्म पानी की कलाई!

चिट्ठी कौन लिखे

दूरभाष पर बतियाते हैं
चिट्ठी कौन लिखे
लम्बा अर्सा हुआ
डाकिया हमको नहीं दिखे

कौन पढ़े अब
काले अक्षर
किसको समय यहाँ
संवेदन हो गया
दिवंगत
कोलाहल जन्मा
विक्रेता हम बने
लिफ़ाफ़े लेकिन नहीं विके
लम्बा अर्सा हुआ
डाकिया हमको नहीं दिखे

दिल लिखता जब
दिल पढ़ता था
झूमा करते हम
कागज़ में चेहरे का रोना
चूमा करते हम
अनुभव सब तब्दील स्वप्न में
तरूणोदय अवधि के
लम्बा अर्सा हुआ
डाकिया हमको नहीं दिखे

खण्डहर सी यादें

था ऐसा भी अवसर घर में
हँसती थी दीवारें
आँगन गाता था
दबे पाँव ही कभी-कभी
सन्नाटा आता था
उड़ते थे सपने अम्बर में

मंगल कलश पूजते
छुटकी नाचा करती
बाबा लकड़ी लाते
कंन्छू पानी भरती
झुकती थीं पलकें आदर में

समय टँगा तस्वीरों में
खण्ड़हर सी यादें
रिश्तों में बिखराहट
मौसम की फ़रियादें
अब तो बस रहते हैं डर में

कौन ये सरहद खींच गया

सन्देहों के शूल
वहम की मुट्ठी
भींच गया
तेरे-मेरे बीच कौन ये
सरहद खींच गया

परछाई के टुकड़े हैं
गाँठों की भाषा
भीतर-बाहर, कोहरा-कोहरा
नहीं खुलासा
आग लगाकर मन में
दुख की क्यारी सींच गया
तेरे-मेरे बीच
कौन ये
सरहद खींच गया

तेज़ धूप के बिम्ब
झुलसता मन वृन्दावन
कान्हा का मोहित मन
और कस्तूरी दर्पन
खोल ग़मों की खिड़की
मन की
आखें मींच गया
तेरे-मेरे बीच कौन ये
सरहद खींच गया

एक गन्ना चूँस लो जी

कसैले स्वाद कम कर लो
शहर के
एक गन्ना चूँस लो जी गाम का
थे कलेवे झोंपड़ी की
चारपाई में
लंच-डिनर अब मिलावट की
मिठाई में
तोड़ लो दातुन जरा रसधाम का
एक गन्ना चूँस लो जी गाम का
लोक गीतों सी खनकती
हर गली
खेत और खलिहान
जैसे मखमली
घाटियों में रूप ढलती शाम का
एक गन्ना चूँस लो जी गाम का
बात ज्यों मिसरी घुली
हर शब्द में
प्रेम की भाषा
यहाँ की नब्ज़ में
अर्थ पा जाओगे अपने नाम का
एक गन्ना चूँस लो जी गाम का

गीत फिर सुनाने हैं

झुरमुट में साँझ तले
गीत जो सुनाए थे
आज फिर सुनाने हैं

गीत कहे -
रंभाती गौरी को
छुटट्न की छौरी को
नींबूआ के कल्लू को
राधे के लल्लू को
छप्पर में सपनों के
महल जो बनाए थे
आज फिर बनाने हैं
गीत फिर सुनाने हैं

गीत कहे -
बासन्ती बदरा को
मृगनैनी कजरा को
गोमतियाँ पानी को
सुगना की नानी को
रातों में चंदा के
गाल थपथपाये थे
आज याद आने हैं
गीत फिर सुनाने हैं

शीत का आना

दिन बने डिबिया
सुराहीदार रातें
बर्फ़ीले अहसास का गाना हुआ
और ऐसे शीत का आना हुआ

आईने से अनगिनत
चोंचें लड़ाकर
एक चिड़िया ने कहा
चुपके से आकर
कर न पाई काम इक ठाना हुआ
और ऐसे शीत का आना हुआ

एक सन्नाटा
पसर कर रह गया जब
खिलखिलाहट की कथाएँ
कह गया जब
कल जो ताना था वही बाना हुआ
और ऐसे शीत का आना हुआ

मुँह अँधेरे
छू गया
ठण्डा धुआँ
कोई झोंका वर्फ़ का
लगता रूआं
भोर के मुँह ओस का दाना हुआ
और ऐसे शीत का आना हुआ

नीड़ का पंछी

भीड़ से निकला
मिला फिर भीड़ में
नीड़ का पंछी
अकेला नीड़ में

वर्जनायें त्रासदी
शहरी धुआँ
ज़िन्दगी के नाम पर
अंधा कुआँ
एक कंपन सा उठा
फिर रीढ़ में

दिन खड़ा रोता है
बादल राग जैसे
रात आती
बाँसवन की आग जैसे
साँझ उतरी
दोपहर भी पीड़ में

टाँग कर कंधे
सदी की लाश
क्या मिलेगा इक नया आकाश
परकटा पंछी तड़पता नीड़ में
भीड़ से निकला
मिला फिर भीड़ में

मोरपंखी शाम

मोरपंखी शाम
उतरी घाटियों में
फिर हिरण का मन
कुलाचें मारता है

एक जंगल है मेरे
सीने के भीतर
पत्थरों पर अनलिखे अनुबंध हैं
गुप्त कब तक
रह सके सम्बन्ध हैं
फूल ही कांटों की पोथी बाँचता है

फड़फड़ाकर उड़ गई
पिंजरे की मैना
हाथ मलता रह गया
हारा बहेरी
दर्द को पहचान कर
अनजान है
एक मछुआरा जो मछली फांसता है

मोहभंग

धीरे - धीरे
संवेदन खो जाता है
अपनो से ही
मोहभंग हो जाता है

रिश्ते, घुटन, कसक, मजबूरी
जिसके निकट
उसी से दूरी
प्रेम न जाने
किधर-कहाँ खो जाता है

भाषा में केवल
लफ्फाजी
चापलूसी और
हाँ जी!
हाँ जी!
स्वाभिमानी व्यक्तित्व
यहीं रो जाता है

उमस
अँधेरे की सुरंग में
लोग अनोखे
अजब ढंग में
जैसे कोई
नागफनी बो जाता है

फटे हुए जूते हैं

टप-टप गिरती
निर्धनताएँ
भूखे खड़े हुए
दो दिन बीते
धुआँ निकले
हण्डी चढ़े हुए
आँगन दूब उगी
पेट में
मरूथल के खूँटे हैं

गंगा ने गोबर में गूँथा
सपना राजकुमार
बन ठन लीपे
चूल्हा-चौका
उतरे नहीं खुमार
बापू के तो ब्याज
भाई के फटे हुए जूते हैं

ऋतुओं की रेखागणित
ये समीकरण
चिथड़ा हुई
ओढ़नी
उस पर चीरहरण
हाय! विधाता
हर मौसम में
हमको ही लूटे है

कच्चे धागों ने

वर्ना हम कब
बँध पाते थे
बाँधा बस !
कच्चे धागों ने

ढाई अक्षर रेशम और
फूलपाश ने
जकड़ लिया
शब्दों में सामर्थ्य
कहाँ थी
ख़ामोशी ने
पकड़ लिया
रिश्तों के
जीवन रागों ने
बाँधा बस !
कच्चे धागों ने

वो आँसू ढूँढ़ो जी !

कविता का गहना है
वो आँसू
ढूँढ़ो जी
पीड़ा के आँगन में
बिखरा है
यहीं - कहीं

हीरा है
मोती है
आँख
यूँ रोती है
हाँ को कभी
मतवाला
कहता है नहीं-नहीं

शब्दों में ढलता है
मिसरी सा घुलता है
कड़वा है
खारा है
मीठा है कहीं-कहीं

तेरा - मेरा नाम

किसी कोयले ने
भींतों[1] पर
लिखकर
दिल को छोड़ दिया
तेरा-मेरा नाम
बीच में
घन से जोड़ दिया

हो हल्ला
हो गया बेसमय
इसीलिये मन रोता है
कहीं अजन्मे
प्रेमपुष्प का
जैसे गर्भपात होता है
ऐसा कौन
महापापी था
सब कुछ तोड़ दिया
तेरा-मेरा नाम
बीच में
घन से जोड़ दिया

1. भींत : दीवार

हमारे प्रेमपत्र

हैं सुधियों के सत्र
हमारे प्रेमपत्र

अनल
हवा
धरती-अम्बर में
जल के शीतल
नल-निर्झर में
बिखरे है सर्वत्र
हमारे प्रेमपत्र

पढ़े जब कभी
हृदय पंखुरी
खिल जाए
शब्द परस्पर
गले शब्द के
मिल जाएँ
सतगंधों के सत्र
हमारे प्रेमपत्र

माँ (एक)

माँ की क्या
तुलना करना है
माँ तो पानी का झरना है
बच्चों का
धरती-अम्बर है
माँ इक आँसू का अक्षर है
इसकी हर पीड़ा हरना है
माँ तो पानी का झरना है

चूल्हे-चाकी में
पिसती है
झाड़ू-बरतन ही
घिसती है
घर में ही
इसका मरना है
माँ तो पानी का झरना है

मोहक
ममता की मूरत है
भोली सी इसकी सूरत है

माँ से तो
ईश्वर डरना है
माँ तो पानी का झरना है

माँ (दो)

देती है ताने
रोती है
माँ आख़िर...
माँ ही होती है

सानी इसका
दुनिया भर में
क्या होगा दूजा कोई
अनसुलझी यह
एक पहेली
इसको ना बूझा कोई
रातों में जगती सोती है
माँ आख़िर...
माँ ही होती है

पर्वत की निर्झर
नदियाँ हैं
न्यौछावर इस पर सदियाँ हैं
इसकी आँखों में मोती है
माँ आख़िर...
माँ ही होती है

छज्जेवाली खिड़की

ऐसा करके
नया कोई आघात न करना
छज्जे वाली उस खिड़की की
बात न करना

जाली से जिसके भीतर
देखा ना जाए
पत्थर से लिपटा काग़ज़ फैंका ना जाए
फिर से कोई मजाक हमारे साथ न करना
छज्जे वाली उस खिड़की की
बात न करना

एक समय था
खुली रही चौबीसों घण्टे
आज कर दिये लोगों ने
छत्तीसों टण्टे रो देंगे हम
भावुक अब जज्बात न करना
छज्जेवाली उस खिड़की की
बात न करना

अब तो सदा लगी रहती है
जिसकी सिटकनियाँ
कैसे भला देख पाएगी वो सतरंगी दुनिया
बेमोसम फिर यादों की बरसात न करना
छज्जेवाली उस खिड़की की
बात न करना

प्रीत निभाता हूँ

उनकी करतूतें
वो जाने
अपनी बात बताता हूँ
मैं तो प्रीत निभाता हूँ

वो नहीं किसी के हुए
ज़माने भर के हैं
वो रहे
अतिथिगृह में
कहाँ वो घर के हैं
मैं आँगन में
विश्वास बीज बो जाता हूँ
क्योंकि प्रीत निभाता हूँ

बाहर कुछ
भीतर कुछ
उनकी थाह नहीं
उनकी बातें
वाह ! वाह !
पर आह नहीं
मैं आँखों से बहता हूँ
जब भर जाता हूँ
क्योंकि प्रीत निभाता हूँ

सपने बोता है

किसी-किसी के साथ
ये अक्सर
होता है
आँसू सूख गए
दिल अब भी रोता है

वह जो खूब
हँसा करता था
किसने मौन किया
ये पर्वत सी पीर
भेंट में
जाने कौन दिया
कल - परसों
फिर मिला
तो बोला-
सपने बोता है
आँसू सूख गए
दिल अब भी रोता है

वैसाखी बन जाते

मिल जाते
टंच जाते
और चाकी बन जाते
हम - तुम
इक - दूजे की
वैसाखी बन जाते

कस्बे के छोटे से
इक घर में
रहते हम
सुख - दुःख सब
हँसी - खुशी
साथ-साथ सहते हम
उड़ते जब झीलों पर
जलपांखी
बन जाते
हम - तुम
इक - दूजे की
वैसाखी बन जाते

कुछ ऐसे भी पत्र

कुछ ऐसे भी पत्र
कभी जो लिखे नहीं
कुछ ऐसे भी मित्र
कहीं जो दिखे नहीं

कुछ क्षण ऐसे यहाँ
अजन्मे रहे सदा
कुछ पल बन पर्याय
नहीं फिर हुए विदा
कुछ ऐसे इन्सान
कभी जो बिके नहीं
कुछ ऐसे भी पत्र
कभी जो लिखे नहीं

कोई ऐसी रात
कभी जो
ढली नहीं
कोई ऐसी आग
कहीं जो
जली नहीं
कुछ ऐसे अध्याय
कभी जो सिखे नहीं
कुछ ऐसे भी पत्र
कभी जो लिखे नहीं

सारा दोष तुम्हारा है

यह फूल
तुम्हारे जूड़े में
जैसे चंदा संग तारा है
अब दोष न देना
भँवरे को
अब सारा दोष तुम्हारा है

ये श्यामल केश
घने कुंतल
दृग कमल
वक्ष ज्यों अमृतफल
रसभरी
सुराहीदार देह ने
स्वप्न दिखा कर मारा है
अब दोष न देना भँवरे को
अब सारा दोष तुम्हारा है

मन कुँवारा रहा

इस तरह मैं
हमेशा तुम्हारा रहा
तन को मेहन्दी लगी
मन कुँवारा रहा

तुम जो कह ना सकीं
मैं जो सुन ना सका
इसलिये घोंसला
कोई बुन ना सका
अन्यथा हम तुम्हारी
क़सम खाते हैं
जो तुम्हारा रहा
वो हमारा रहा

नाम मेरा कभी तुम
लिखो तो सही
प्रेम की हाट में फिर
बिको तो सही
ज़िन्दगी रखके गिरवी
चले आएंगे
ऐसे ग्राहक से
क्यों फिर किनारा रहा

आधी कटोरी चाँदनी

एक टुकड़ा धूप
और
आधी कटोरी चाँदनी
भींच कर दो मुट्ठियों में
भाग जाएँ
इस जगह पहरा खड़ा है
रोशनी का
अंधकारों से यहाँ
रिश्ता कोई लगता बड़ा है
हो न जाए
अब निबोली चाँदनी
एक टुकड़ा धूप
और
आधी कटोरी चाँदनी

जब सुराही में
भरी हो रोशनी
रोशनी को सब तरसते ही रहें
पुर्जा-पुर्जा
बादलों सी ज़िन्दगी
बस भटकते और
बरसते ही रहें
चाहिये उस वक्त
थोड़ी चाँदनी
एक टुकड़ा धूप

और
आधी कटोरी चाँदनी

आदमी जब चूमता हथियार हो
मौत का व्यापार
ख़ुद करने लगे
वह जो कोमलतम हो
और मासूम हो
हर समय
भयभीत सा रहने लगे
तब लगे
अग्नि की डोरी चाँदनी
एक टुकड़ा धूप
और
आधी कटोरी चाँदनी

बाद बरसों के
कवि की
आँख तक आकाश आया
रेत
गुलमोहर बनी
अब कल्पना ने
ख़ुद कवि को
था बुलाया
जैसे छत पर एक गोरी चाँदनी
एक टुकड़ा धूप
और
आधी कटोरी चाँदनी

बिजली के तारों पे कबूतर

.ख़ूनी सड़कें
दुर्घटनाएँ
पक्षपाती अख़बार हो गए
हत्यारे नेता बन बैठे
ओछे पत्रकार हो गए
अर्धसत्य में डूबी ख़बरें देते हैं
बिजली के तारों पे कबूतर बैठे हैं

धरती जब लावा देती हो
शोले बरसाता बादल हो
हवा ज़हरीली चले जहाँ पर
आँखों में .ख़ूनी काजल हो
आँसू के पानी में आग समेटे हैं
बिजली के तारों पे कबूतर बैठे हैं

सुबह जहाँ दंगों से होती
दिनभर कर्फ़्यू चलता है
आत्मदाह कर लेती आत्मा
अंधा सूरज ढलता है
चंदन सी देही पर सर्प लपेटे हैं
बिजली के तारों पे कबूतर बैठें हैं

शिलालेख

देख सके तो देख
समय के शिलालेख

देख व्यथित हैं
संगमरमरी बूढ़े पत्थर
झगर-मगर थे
शीश महल
हो गये खण्डहर
कहाँ उड़े कहकहे
बैठ इन सन्नाटों पर
आज पर्यटक ढूँढ़ रहे है
छिपे पड़े आलेख
समय के शिलालेख

टूटी अभिव्यक्ति
गुज़रे रचना के अवसर
धूले सने फव्वारे अब
सूखे वो सरवर
नक्काशी खुरदुरी
झरोखों पर
दीमकधर
खोल मुट्ठियाँ देख
हाथ की रेख
समय के शिलालेख

जै-जै कार करो

ये भी अच्छे
वो भी अच्छे
जै-जै कार करो
डूब सको तो
चूल्लू भर पानी में डूब मरो

लेकर आप बिराजै
लड्डू दोनों हाथों में
मुँह के मीठे
अवसरवादी
रिश्ते-नातों में
अब तो मुई सफ़ेदी आई
कुछ तो शर्म करो

भीतर चुप्प
मुखौटे बोले
हँसकर गले मिले
ईर्ष्याओं के द्वार
हृदय के पन्ने जले मिले
कुशलक्षेम तो पूछो लेकिन
अवगुन चित्त न धरो

यह सदी

आग की बहती नदी है
यह सदी
लिख रहे केवट यहाँ के
हादसों की वारदातें
ख़ून से छपते सभी अख़बार
कितनी आत्मघातें
रोज ही निर्लज्ज होती
जनपदों पर द्रौपदी

लूट लेते तट यहाँ के
जानकी की अस्मिताएँ
अब हवन कुण्डों में जलकर
भस्म होतीं बालिकाएँ
हर सुबह बीमार सूरज
फेंक जाता त्रासदी

कौन जिम्मेदार ?
जब अपराधियों का गाँव हो
ख़ून से लथपथ डगर
काँटा चुभा हर पाँव हो
मार्गदर्शक ही जहाँ पर
ढो रहे केवल बदी

बाज़ार भाव

सुबह शाम
अखबार-रेडियो
दे जाते हैं घाव
बता बाज़ार भाव

मिर्च मँहगी, चीनी उछली
दूध, दही, घी भारी
नन्हा सा वेतन ढोता है
घर की जिम्मेदारी
दीमक चाट गई जेबों को
पार लगे क्या नाव, चढ़े बाज़ार भाव

नमक उठा और गुड़ में तेज़ी
आलू प्याज चढ़े
दाल तेल की उछल कूद में
अब्बा दीन खड़े
सुन करके राशन की कीमत
हमें चढ़ गया ताव, पढ़े बाजार भाव

दिन दूनी है, रात चौगुनी
मँहगाई की मार
मंडी की जलती पगडण्डी
पाँव खड़े लाचार
हार गए सट्टे में जीवन
किसे लगाएँ दाव, बढ़े बाजार भाव

छोटा सा वेतन

इतनी सी गर्मी
और इतना पसीना
छोटा सा वेतन और लम्बा महीना

घर का किराया
और दूध का बकाया
नल का और बिजली का
बिल भी चुकाया
राशन की मँहगाई
जाए सही ना

सूरज से ऋण लेकर
देहरी पर आता हूँ
आधे में चाँद जी का
ब्याज ही चुकाता हूँ
टिम-टिमाते खर्चों में
मुश्किल है जीना

तन पर तो जकड़न हैं
और सिर में चक्कर
डिब्बों में ख़त्म हुए नमक मिर्च शक्कर
दुपहर की छुट्टी में चाय भी मिली ना

शहरों की शिक्षा में ऊँची ये फीसें
जेबों के बटुए में लगती हैं टीसें
कमरे में गुमसुम हैं रीना और टीना

धूप

ठिठुरन में
झाँक गई
खिड़की से धूप
छज्जे पर चमका फिर
किरणों का रूप

आँगन में छपते हैं
पेड़ों के चित्र
नियति का रेखांकन
कितना विचित्र
हिरणी का मोहित मन
कस्तूरी धूप

माचिस की ड़िबिया से
छोटे हैं दिन
लम्बा है
तगड़ा है
रातों का जिन्न
मन भाए काली कम्वलियाँ कूरूप

ठण्डे दुपट्टे हैं
मौसम के घर
सरसों पर चढ़ आया
पीला अम्बर
खेतों में गेहूँ के मोती अनूप

बीत गए दिन

वीत गए
किवाड़ के पीछे
छिपकर
शक्कर खाने के दिन

हट-मनुहारों भरे
छमक-छम
घोड़ी बन आँगन में फिरते
भैया से भाभी की बतिया
कानों में कह जाने के दिन

खेतों से चलकर जव आते
बंशी के छज्जे पर चढ़कर
इक तुतलाती शर्त लगाते
गत्ते की गाड़ी के बदले
छत पर नाच नचाने के दिन

छग्गनु से झगड़ा
मग्गनु से कुट्टी करते
सीकी गरम गेहूँ धानी
जेबों में भरते
चौपालों पर साँझ खेलते
छुप्पी में गुम जाने के दिन

क्या लिक्खें

काग़ज़ की बेवा धरती पर
क्या लिक्खें
क्या बोएं
मीठे कर्मो के कड़वे फल
चौखट पर रोएं

लिखें आम पर मिले धतूरे
किसको क्या बोलें
ऊँच-नीच के बाट
तराज़ू सिक्कों को तोलें
पाखण्डी पापों की गठरी
गंगाजी धोएं
मीठे कर्मो के कड़वे फल
चौखट पर रोएं

झील में आकाश

झील में आकाश जितना
मछलियों की आँख में
विश्वास
घाट पर बैठे मछेरे
जाल डाले
डोंगियों के साथ

जाल की
बुनावट में
रेशमी कसावट है
हर जगह गिठानों[1] में
की गई
सजावट है
वह नकल जो
दे असल को मात,
घाट पर बैठे मछेरे
जाल डाले
डोंगियों के साथ

1. गिठान : धागे में लगाई गई गाँठ

सूर्यबीज बोने होंगे

बांझ धरा पर
तिमिर विषैले
फन फैलाए
नाच रहे हैं
ज्योतिवृक्ष की शाखाओं पर
अँधियारे अभिशाप रहे हैं

अंधा कालखण्ड कंधों पर
भटकी हुई दिशाएँ सारी
झुलसे कदम
कठिन पगडण्डी
हैं समक्ष यात्राएँ भारी
मन ही मन में
दबे सिसकते
कितने ही अनुराग रहे हैं

रक्त कणों से
हमें धरा के
कुल कलंक धोने होंगे
मौसम की
वंशावलियों में
सूर्यबीज बोने होंगे
दीपक तो क्षणभर में बुझकर
रातों के संताप रहे हैं

लिखना अब ऐसी भाषा

जाने कितनी बार
पढ़ा वह पत्र
रहा प्यासा का प्यासा
मन को तृप्त करे
लिखना अब ऐसी भाषा

भाषा जिसके भावों में
खनके सच्चाई
अक्षर-अक्षर जहाँ
प्रेम की हो भरपाई
स्वार्थ
कपट
छल-दंभ
द्वेष का
हटे कुहासा
मन को तृप्त करे
लिखना अब ऐसी भाषा

शब्दों पर पहरे हैं

पंक्ति पगडंडी बनी
अक्षर से चेहरे हैं
शब्दों पर पहरे हैं
अर्थ बड़े गहरे हैं

मंत्रमुग्ध कौन है ?
चिल्लाता मौन है
लक्ष्य पर पहुँचते ही
प्रमुख लगा गौण है
सागर के इस तट से
उस तट तक लहरे हैं

प्रश्न चिन्ह जिन्दगी
उत्तर कुछ भी नहीं
अपभ्रंशों के युग में
संशोधन ही नहीं
कानों में सीसा है
सदियों से
बहरे हैं

तनखाह

बीस दिन
चलती फकीरी
दस दिनों के शाह
लो !
तन खा गई
तनखाह

यह सफ़ेदी
यों नहीं आई मियाँ
दर-ब-दर की
ठोकरें खाई मियाँ
उम्र तक भी
ले न पाई थाह

भूख बढ़ती
घट रहा राशन यहाँ
ये सभायें, वोट ये भाषण यहाँ
तीस युग सा
लग रहा इक माह

लीडरों के ढंग
न्यारे हैं लगे
ये चुनावी रंग
न्यारे हैं लगे
आह अपनी और
उनकी वाह!

कब तक ठहरोगे बोलो

आए तो हो
आषाढ़ की तरह
ओ सपनों के मेघदूत
पर मूल्यों के
इस महानगर में
कब तक ठहरोगे बोलो

कौन दिशा के
तुम सौदागर
आगे और कहाँ जाओगे
प्रिय
प्रवासी प्रथम मित्र
मन की आँखें तो खोलो
कब तक ठहरोगे बोलो

इस सुख-दुख के लेनदेन में
कितना लाभ कमा जाते हो
ओ रिश्तों के व्यापारी
शब्द तराजू तोलो
कब तक ठहरोगे बोलो

पवनदेश के बादलवासी
कहाँ तुम्हारा ओर-छोर है
ओ नभ के मछुआरे
नदिया की पतवारें खोलो
कब तक ठहरोगे बोलो

मुस्काएँगे

हमको तो
खुशियाँ देनी थीं
बदले में
हिचकी लेनी थीं

इसीलिये हम ग़म में भीगे
गीत नहीं गा पाएँगे
जब तक साँस रहेगी बाक़ी
होठों से मुस्काएँगे

जिन रिश्तों में
भाव ताव हो
हम उस मण्डी क्यूँ जाते
बिछे जहाँ सम्मानपत्र हों
उस पगडण्डी क्यूँ जाते
अतः हम कभी
अख़बारों की
सुर्खी में ना आएँगे
जब तक साँस रहेगी बाक़ी
होठों से मुस्काएँगे

वो पगली नही है

हाथ में पत्थर उठा कर दौड़ती है
बीच चौराहे खड़ी जो
बाल अपने नोचती है
जाना होता है कहीं जाती कहीं है
किन्तु मेरे दोस्त वो पगली नहीं है

रात थाने में रही थी
पेट लेकर लौट आई
क्या कहें किसको कहें
कैसे-कहाँ पर चोट खाई
मानसिक संताप की लगर्ता बही है
किन्तु मेरे दोस्त वो पगली नही है

बाल विधवा के लड़कपन का
नतीजा है वो पगली
लोग कहते इस शहर भर में
फजीता है वो पगली
आचरण से आज वो जंगली सही है
किन्तु मेरे दोस्त वो पगली नहीं है

प्रश्न है वो औरतों के
मान का सम्मान का
प्रश्न है वो भेड़ियों द्वारा
किये अपमान का
प्रश्न कितने हैं मगर उत्तर नहीं है
और मेरे दोस्त वो पगली नहीं है

गीत तुम अमर रहो

प्रिय प्यासे अधरों को छू कर सँवर रहो
मैं मर जाऊँ गीत सदा तुम अमर रहो

तुम विपदा में विश्वास बनो दुखियारे का
तुम इक उजला आकाश बनो अँधियारे का
जग की नदिया में रहो मछली की तरह वहो
मैं मर जाऊँ गीत सदा तुम अमर रहो

जाओ रागों में सजो बजो कूँचों गलियों
तुम उत्सव की मुस्कान बिखेरो रंगरलियों
हर फूल, कली, पंखुरी के भीतर जा महको
मैं मर जाऊँ गीत सदा तुम अमर रहो

दिन

दिन के कितने गोरख धंधे
उजला-काला दिन
कहीं खेलते बच्चे जैसा
भोला-भाला दिन

ठालेपन में सड़कें नापी
अब तो शाम हुई
सूना घर, कंगाल रसोई
मेरे नाम हुई
आवारा फिरता रातों में
आँगन पाला दिन

इक्का-दुक्का
वही पुराने केवल ताश नये
वही-वही फिर खेल खिलाड़ी
बस उस्ताद नये
बुनता स्वयं उलझता भी है
मकड़ी-जाला दिन

भीतर-बाहर
साँकल-साँकल सरहद खड़ी हुई
खामोशी की
टहनी पकड़े
चिन्ता बड़ी हुई
हर किवाड़ मन की कुण्डी पर
लगता ताला दिन

मन

इक मन कहता है
यह करले
दूजा मना करे
दोनों ही मन इक दूजे से
उल्टे चला करें

इक मन बोले
पीर-फकीरी में
लग जा बन्दे
दो दिन का ये खेल
जगत में सब झूठे धन्धे
पर दूजा मन माया के वश
घर का भला करे
दोनों ही मन इक दूजे से
उल्टे चला करें

इक मन बोले
छोड़ बुराई त्याग सूदखोरी
दूजा मन अण्टी को पकड़े
करे ख़ूब चोरी
इस चतुराई में चातक
खुद को ही छला करे
दोनों ही मन इक-दूजे से
उल्टे चला करें

जल गया है झील का जल

चू रहा तन से पसीना
जून का जलता महीना
तप गईं सड़कें तवे सी
हाँफते हैं लोग
प्यास अधरों पर चढ़ी
बनकर अजाना रोग

आग की लपटें लिए
फिरती हवाएँ
आँधियाँ
लू
धूल की गाती कथाएँ

जल गया है झील का जल
कीच बाकी है
मौसमी बरसात का
दिन अभी बाकी है
लो !
किसी माथे से फिर
टपका नगीना

दर्द के शिखरों पे

दर्द के शिखरों पे चढ़ कर जब रचोगे माधुरी
गीत के उपवन में प्रियतम तब बनोगे बाँसुरी
आह को आवाज़ देना
अश्क को पुचकारना
प्यार जिससे हो
हमेशा जीत कर भी हारना
ख़ुशबूओं के देश जाकर माँगना मत कस्तूरी
प्रेम के परिणाम तो
पूरक मिले हैं आज तक
अंधकारी वंश के
सूरज मिले हैं आज तक
शब्द के सौदागरों को मिल गई है चातुरी

सोना उपजा लें

मिट्टी से
सोना उपजा लें
मिट्टी में
मिलने से पहले

श्रम जीवन का
मूलमंत्र है
खुशहाली का
अर्थतंत्र है
सबको छोड़
इसे अपना लें
मिट्टी में
मिलने से पहले

जिसका बहे
पसीना जितना
चम-चम करे
नगीना उतना
तन-मन का
हीरा चमका लें
मिट्टी में
मिलने से पहले

शब्दों की शवयात्रा

रच लूँगा बाद में
जी तो लूँ
कथा-व्यथा
शब्दों की शवयात्रा
ढोऊंगा अन्यथा

बैठा हूँ वर्तमान
घटना के गर्भ में
रहती है आग ज्यों
पथरीली बर्फ़ में
आऊँगा तनकर के
योद्धा फिर बनकर के
होगी ना गाँडीव की
अपमानित प्रत्यंचा

छप लूँगा
ख़ूब-ख़ूब
व्यर्थ में रचूँगा तो
रद्दी में बेचेंगे
सत्य से बचूँगा तो
सार्थक ना होगी फिर
रचना की प्रक्रिया

पेटियों में बंद है जनतंत्र

खत्म हैं अब
आम जनता की सभाएँ
थम गया चर्चा
सभी सत्ताधीशों का

रुक गई दिल में
धड़कती राजधानी
कैसी होगी
देश की
अगली कहानी

भीड़ के जनमत का
क्या आदेश है
स्पष्ट बहुमत !
प्रश्नवाचक देश है

हो न हो गठजोड़
फिर षड़यंत्र का
पेटियों में बंद
इस जनतंत्र का

सुनो ! वे बड़े लोग हैं

उनसे रहना दूर
सुनो ! वे बड़े लोग हैं
नंगी भूखी
जनता के
सिर चढ़े लोग हैं

वे राजा हम सेवक भाई
बीच हमारे
गहरी खाई
सामन्ती जन संघर्षों में
हमने ही फाँसी लगवाई
जनपथ पर
निर्वाचन में जो
खड़े लोग हैं
सुनो! वे बड़े लोग हैं

वे चाहें गोली चलवा दें
वे चाहें सूली चढ़वा दें
हमको देश निकाला देकर
बहिनों की बोली लगवा दें
राजनीति के
गलियारों में
पढ़े लोग हैं
सुनो ! वे बड़े लोग हैं

तक्षशिला को याद किया है

प्रिये तुम्हारा
जब-जब भी अनुवाद किया है
नालन्दा और
तक्षशिला को याद किया है

कालीदास की
विरह-व्यथा हो
बाणभट्ट की आत्मकथा हो
या प्रतिमा हो शुभे
अजन्ता-ऐलोरा की
क्यों तुमने
खजुगहो का
प्रतिवाद किया है
नालन्दा और
तक्षशिला को याद किया है

कल सुबह मतदान है

रात को दारू बँटेगी
कल सुबह मतदान है

पी रहे थे देसी ठर्रा
आज अंगरेजी चढ़ेगी
रंग खादी के हमें उपदेश देंगे
इससे रंगरेजी बढ़ेगी
हम ग़रीबों पर तो
यह एहसान है
रात को दारू बँटेगी
कल सुबह मतदान है

उन्नति का अब हमें आभास होगा
जो पिलाएगा खिलाएगा
हमारा ख़ास होगा
कौन कहता राष्ट्र का अवसान है
रात को दारू बँटेगी
कल सुबह मतदान है

कल सुबह मतपत्र पर ठप्पे लगेंगे
कुर्सियाँ किसकी शरण में जाएगी
बन्द होगी पेटियाँ, सट्टे लगेंगे
बस्तियों में हो गया ऐलान है
रात को दारू बँटेगी
कल सुबह मतदान है

नेताओं के जूता मारे

भीड़ नहीं है भेड़
चराले
जो मनचाहे
आओ कक्का !
नेताओं के जूता मारे !

धनिया तो
कर्ज़े में डूबा
छाती कूट रहा
खुलेआम बस्ती में देखो
बनिया लूट रहा
कोठी में सरपंच शराबी
ठठ्ठा मारे
आओ कक्का !
नेताओं के जूता मारे !

बिरजू की
विधवा के ऊपर
वार्डपंच है
हरिया की
चण्डाल-चौकड़ी
रंगमंच है
मुंशी के सत्ते पे
अबके अट्ठा मारे
आओ कक्का !
नेताओं के जूता मारे !

रो रहा गणतंत्र !

जनता का है तंत्र
और ये उलझे उलझे मंत्र
यहाँ पर संसद एक दुकान
जहाँ हैं सत्ता का सामान
ख़रीदे कुर्सी जो बलवान
करेंगे भारत को नीलाम
रो रहा गाँवों में गणतंत्र
और ये उलझे-उलझे मंत्र

इन्हें धिक्कारो सौ-सौ बार
करो शब्दों के कड़े प्रहार
लूटते बनकर पहरेदार
कराते हैं ये नर-संहार
बोलते उज्जवल है जनतंत्र
और ये उलझे-उलझे मंत्र

चुनावों में बँटती है खीर
आ गए लेने वोट फकीर
आचरण में लगते गंभीर
ये रांझे कुर्सी इनकी हीर
नित नये करते हैं षड़यंत्र
और ये उलझे-उलझे मंत्र

शासन तंत्र

कुछ हमारी
कुछ तुम्हारी
कुछ सभी की है
बात
शासन तंत्र में
आई कमी की है

एक सच बोले तो
दूजा झूठ को तोले
बिक रहे बाज़ार में
वक्तव्य के गोले
अब हथेली पर
कटोरे में फकीरी है
बात शासनतंत्र में
आई कमी की है

दिल मशीनों के
धड़कते
तो भला होता
आदमी ना आदमी से
यूँ छला होता
बात ये बुनियाद की
कारीगरी की है
बात शासनतंत्र में
आई कमी की है

क़लम बंदूक बन जाए

शब्द अब बारूद बन जाए
क़लम बंदूक बन जाए
इन दिनों निर्माण की
रचना नहीं विध्वंस होगा
आज सत्ताधीश वो
कल कटघरे में कंस होगा

कब तलक छलते रहेंगे
हम स्वयं को
काग़ज़ों पर कब तलक
सरसों उगाएंगे
घोर अंधेयुग में
संधिगीत लेकर
कौरवों को बाँसुरी
कब तक सुनाएंगे
भेड़ियों का नाख़ूनी
पंजा जो तन जाए
शब्द तब बारूद बन जाए
क़लम बंदूक बन जाए

दरार नींव तक है

चोट-दर्द
गहरा है
वैद्यराज बहरा है
झूठ ही तो सच है
दरार नींव तक है

रात से तो दोस्ती है
दिन की दुश्मनी हुई
अब अँधेरों की
गुफा में
कैद रोशनी हुई

यहाँ - वहाँ
इधर-उधर
हर तरफ तमस है
दरार नींव तक है

अग्नि के धगे

सिर पर लेकर बोझ ग़रीबी
कब तक भागे
रे मितवा तू बोल !
ये मन खट्टा क्यूँ लागे

क्यूँ लागे सरपंच हमारा
हमको गुण्डा
क्यूँ मन्दिर का पण्डा
लागे हैं मुश्टण्डा
कब तक हम पर
आँख गड़ा बैठेंगे कागे

मौसम भी कमबख़्त
ठिठोलीबाज़ हमारा
खेत खा गये फ़सल
बिलखता आज हमारा
जहाँ जाएँ
दुर्भाग्य हमारे आगे-आगे

मजदूरो !
सघंर्ष मांग को भरना होगा
अपने ख़ूं से लाल
ज़मीं को करना होगा
शोषक की छाती बिंधे
अग्नि के धागे

राजा मूरख रे !

मैं भी ज्ञानी
तू भी ज्ञानी
राजा मूरख रे !

कोढ़ी में, समझौता कर ले
मुश्टण्डों से हाथ मिलाए
दिशाहीन
दरवाज़े खोले वैरी को
न्योता भिजवाए
पश्चिम की तो चाल चले
पर बोले पूरब रे !
मैं भी ज्ञानी
तू भी ज्ञानी
राजा मूरख रे !

चापलूस सब दरबारी जन
गीदड़-लोमड़ फौज बनाई
हुकुम, हुजूरी, हरम, हठी में
रजधानी गिरवी रखवाई
लम्बी ओढ़े, खूँटी ताने
सोया सूरज रे!
मैं भी ज्ञानी
तू भी ज्ञानी
राजा मूरख रे !

भारत के स्वप्न

उड़ते हैं पुष्पक विमान में
धरती पर कम ही रखते हैं
चरण कमल
रहते हैं स्वर्गीय सुखों में
खाते हैं अमृत फल
पीते गंगाजल

दीन दुःखी जन के
हित चिन्तक
पीड़ाओं का शंख बजाते
सात सागरों पार बैठकर
कृपि भारत के स्वप्न सजाते
आते हैं संसद में
पहन कर वस्त्र धवल

कुशल बहेरी
इन्द्रप्रस्थ के
नौटंकी के जादूगर वो
बदल मुखोटे, गिरगिट धर्मी
निर्धनजन के बाजीगर वो
भाषण की मीनारें
रचते शब्द महल
खातें हैं अमृत फल
पीते गंगाजल

आये हैं अध्यक्ष महोदय

आये हैं अध्यक्ष महोदय
संचालक जी चहक पड़े
सभा कक्ष के
चाटू-चमचे
मालाओं से महक पड़े

वाह !
वाह !
गुणगान हो उठा
उपलब्धि के
पौथे खोले
अध्यक्षी उद्‌बोधन में वो
गम्भीरतापूर्वक
यों बोले
जैसे खीर भरे प्याले में
भर-भर चुटकी नमक पड़े
सभा कक्ष के
चाटू-चमचे
मालाओं से महक पड़े

वैर नही सागर जी !

घड़ियाली करतूतें
भड़काएं लहरों को
मछली का
पानी से
वैर नही सागर जी !

तट के टुकड़े कर दे
उनकी ये मन्शा है
दे जाते फूट भरे
अंगारे अनचाहे
कपटी व्यवहार करे
पीछे से वार करे
गीदड़ के वंशज है
शेर नही सागर जी !

सूखा पत्र मिला

कवि सम्मेलन बंद पड़े हैं
कवियों में जयचन्द खड़े हैं

यहाँ निमन्त्रण कविता का
ना ही अन्यत्र मिला
इस मोसम भी
आयोजक का
सूखा पत्र मिला

बोल कवि
तू बोल बोल के
पोल ढोल की खोल
पहने हैं
नकली कवियों ने
शब्दबाण के चोल
कविता तो मंचों पर होगी
बोतल खोल पिला
इस मोसम भी
आयोजक का
सूखा पत्र मिला

गीतपत्र सम्पादक जी को !

आप !
बड़े बुद्धिजीवी हैं
कविता की पहचान आपको
रचनाओं का मर्म समझते
रचनाधर्मी धर्म समझते
वर्तमान में भटका है साहित्य
सुधार करो !
सम्पादकजी !
मेरी रचना पर उपकार करो !

अंक-अंक में लेख आपके
कड़वा सत्य बताते हैं
पढ़ते ही सम्पादकीय
सब रोम खड़े हो जाते हैं
नव घटनाओं के गायक हो
खलनायक जग के नायक हो
विशेषांक के कॉलम में
थोड़ा विस्तार करो
सम्पादक जी !
मेरी रचना पर उपकार करो

नक़्शा

नक्शा बता रहा है
पक्की
सडक जहाँ पर
होती नहीं
असल में
पगडण्डियाँ वहाँ पर

काग़ज़ में
बन रहीं हैं
हर वर्ष योजनाएँ
मंचों पे
कर रहे वो
खुशहाल घोषणाएँ
उन पर अमल है कितना
सच हो रही
कहाँ पर ?
नक़्शा बता रहा है
पक्की
सड़क जहाँ पर

शब्दभेदी तीर

हम श्रवण
वो शब्द भेदी तीर है
पुण्यफल को
मिल गई तकदीर है
जब सृजक
कंधों पे
दृष्टिहीन हो
प्यास
बिन पानी
तड़पती मीन हो
रात के
आखेट की
तस्वीर है
हम श्रवण
वो शब्दभेदी तीर है

शोक पत्र आ जाते हैं

कहाँ किया इन्कार
देहरी
खुशियों की
सौगातों को
लेकिन बिना
निमन्त्रण के ही
शोक पत्र आ जाते हैं

हँसने को
व्याकुल रहते हैं
त्योहारों पर
आस लगाते
कोई डाक-लिफ़ाफ़ा आए
ख़ुशियों का
परचम फहराते
तभी अचानक !
मातम के
काले बादल
छा जाते हैं

श्मशानी गंध

यादों का
झूलता कदंब है
स्मृतियों में
श्मशानी गंध है

आहों में
आँसू के
गीत हैं
सपनों में
अनबोले मीत हैं
आँखों में
दर्द का निबन्ध है
स्मृतियों में
श्मशानी गंध है

कितने मुहावरे
बना गई
घटना जो
काल में
समा गई
मौन रहना
मृत्यु की पसन्द है
स्मृतियों में
श्मशानी गंध है

प्रेतात्मा

नदियों के श्मशान घाट पर
मुर्दे की देही से निकली
वटवृक्षी शाखों पर बैठी वो छाया
देख रही अवसादग्रस्त
परिजन के आँसू
प्रियतम का शोकाकुल होना
चंदन में चंदन जल जाना
फूल, हड्डियाँ, राख, बिछौना
कहाँ गई रेशम सी काया ?

प्रेतात्मा
बेचैन व्यथित
फिरती घाटों पर
अर्द्धरात्रि श्मशान जागता
लगते मेले
उल्लू-चमगादड़ से प्रगटे
भूत-चुड़ैले
शोकगीत बरगद ने गाया

हाहाहुती करते
शब्द अमंगलकारी
आ बैठे फिर चिता तापने
कुछ व्यापारी
जीवन ने कितना भरमाया
देख रही वो छाया

आँख भर आई

मित्र तुम्हारा चित्र देखकर
आँख भर आई
चटख गई
सुधियों के दर्पण
मन की तरूणाई

ठहर गए इक क्षण को जैसे
घड़ियों के काँटे
दूर क्षितिज तक छितराये
भीतर के सन्नाटे
कुछ उदास रंगों को लेकर
साँझ उतर आई

गाल चूमता निकल गया
इक ख़ुशबू का झोंका
और लगी दुनिया हमको
बस साँसों का धोखा
कौन करे सूने आँगन में
वैसी भरपाई

लाश बोलेगी

चिता ने कर लिया श्रृंगार
पर लगता सभी को
कि उठकर लाश बोलेगी
हँसेगी
खिलखिलाएगी
हमें बाँहों में
भर लेगी
ये जादू
सत्य हो जाए
वो बातें चार कर लेगी
चुप्पी तोड़ श्मशानी
कपालीदाग बोलेगी

अचानक !
मर गए सपने
हवेली ढह रही है
उधड़ कर देह की चादर
नदी में
बह रही है
समय की बर्फ पर चलकर
धधकती आग बोलेगी

ख़त्म हुआ नाटक

बन्द करो
माईक-लाईटें
खींचो पर्दा
सूत्रधार अब कह दो
ख़त्म हुआ नाटक !
पात्र खड़े
संवादहीन
सब मौन धरे
किसी कथानक की
अब चिन्ता कौन करे

दर्शक बैठे लाक्षागृह से
रंगमंच में
आपाधापी
छीना-झपटी
छल-प्रपंच में
काट गया रिबिन
उद्घाटक
खत्म हुआ नाटक

अंजातशत्रु

एक परिचय

जन्म	:	15 जुलाई, 1971
जन्म स्थान	:	झीलों की नगरी, उदयपुर
माँ	:	राजकुमारी राव
पिता	:	गोवर्द्धन सिंह राव
रचनाकाल	:	1985 से अब तक
प्रकाशन	:	'राजस्थान के प्रतिनिधि ग़ज़लकार', 'खुशबू के रंग', 'शब्दयात्रा' सहित कई संकलनों में सम्मिलित एवं देश की अधिकांश पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित, 'आधी कटोरी चाँदनी' (2000) पहला संग्रह।
लेखन हस्तक्षेप	.	गीत, नवगीत, कविता, ग़ज़ल, कहानी, बाल कविता, लेख, पुस्तक समीक्षा, साक्षात्कार एवं स्वतंत्र पत्रकारिता।
प्रसारण	:	दूरदर्शन एवं आकाशवाणी से नियमित प्रसारण के साथ ही राष्ट्रीय कवि सम्मेलनों में काव्यपाठ।
संयोजक	:	'हरावल' जन साहित्य एवं संस्कृति मंच, राजस्थान
विशेष	:	बारह कविताओं की लघु काव्य पुस्तिका 'चुनावी गोरखधंधा' प्रकाशित (1999) एवं अनेक नुक्कड़ नाटकों में कवितापाठ।
आजीविका	:	शिक्षा विभाग में श्रमिक।
सम्पर्क	:	'कनुप्रिया' 360, सुखदेवी नगर, बेदला - 313 016 उदयपुर (राज.)
दूरभाष	:	0294—441420

उन्हें पढ़ कर देर तक सोचते रहने को मन करता है।

ग्रामीण पृष्ठभूमि के कवि का अर्जित नगर-बोध मिलकर 'आधी कटोरी चाँदनी' के गीतों को एक ऐसा भाव-बोध प्रदान करते हैं—जिसमें स्मृतियों के जुगनू दिपदिपाते हैं, विगत के शिला-लेखों की लिपि बूझी जाने लगती है, आयु के अंतिम पड़ाव पर अतीत का खंड-काव्य सुनने का मन करने लगता है।

बहुत कम शब्दों में 'आधी कटोरी चाँदनी' के गीतों के विषय में बहुत अधिक नहीं कहा जा सकता है। लेकिन, अजातशत्रु के गीतों में ऐसा कुछ अवश्य है—जो पाठक को अनायास अपनी ओर खींचता है, बाँधता है, और देर तक सोचने के लिए मजबूर करता है।

—जहीर कुरेशी

ISBN 81-86694-17-X